क्रान्ति की बारहखड़ी

❑ सुरेश पंडित

शिक्षा समाज की गतिशीलता से निरपेक्ष प्रक्रिया है या उससे गहरे संबंद्ध समग्र प्रक्रिया ? शिक्षा के प्रति समग्रतावादी दृष्टिकोण उसके फलक को किस तरह व्यापक और उसके असर को प्रभावी कर सकता है - यह क्यूबा का साक्षारता - प्रयोग प्रमाणित करता है । लेकिन शिक्षा के प्रति समग्र दृष्टिकोण यदि इसकी मूल प्रकृति और प्रकार्यगत विशिष्टता पर आधारित न हो तो नतीजे उलट भी सकते हैं । बहरहाल, ''क्रान्ति की बारहखड़ी'' शिक्षा की समझ व संभावना पर विचार की उत्प्रेरणा को बल देती है । साथ ही, शिक्षा के प्रसार में 'राजनीतिक इच्छा-शक्ति' की भूमिका को रेखांकित करती है ।

सत्ता में आने के ठीक दो वर्ष बाद 26 सितम्बर, 1961 को संयुक्त राष्ट्र संघ की जनरल असेंम्बली में क्यूबा के प्रतिनिधि की हैसियत से राष्ट्रपति फिदेल कास्त्रो ने पूरे आत्मविश्वास के साथ यह घोषणा कर लोगों को स्तब्ध कर दिया था कि आने वाले वर्ष में हमारी जनता का इरादा निरक्षरता के खिलाफ एक निर्णायक युद्ध लड़ने का है । इसका वांछित लक्ष्य होगा हर एक देशवासी को इस समयावधि में पढ़ना-लिखना सिखा देना । इस घोषणा पर एड़ेलाई स्टीवेन्सन और खुश्चेव ने तो सार्वजनिक रूप से कुछ कहने से इनकार कर दिया था । लेकिन अधिकतर प्रतिनिधियों ने इसके पूरा होने के प्रति अविश्वास व्यक्त किया था ।

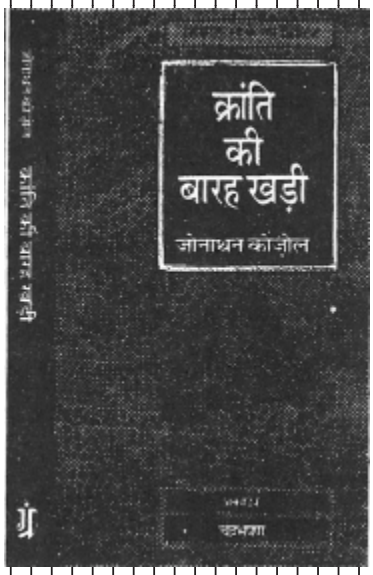

1953 की जनगणना के अनुसार क्यूबा की जनसंख्या में कुल 40 लाख वयस्क स्त्री-पुरुष थे । इनमें निरक्षरों की संख्या 10,32,849 थी अर्थात् प्रत्येक चार वयस्कों में से एक निरक्षर था। क्यूबा की जनता ने भूमि सुधार और स्वास्थ्य संरक्षण के लिये चलाये गये अभियानों की तरह इस साक्षरता अभियान का भी जोश-खरोश के साथ स्वागत किया । यद्यपि वहां के शिक्षकों के लिये यह चुनौती उनके सामर्थ्य से बाहर थी । उनकी कुल संख्या 36000 थी जबकि शिक्षक निरक्षर का अनुपात अधिकतम 1 के पीछे 4 रखने पर भी अढ़ाई लाख से अधिक शिक्षकों की जरूरत थी । फिदेल ने पहला काम यह किया कि अपने शिक्षा मंत्री को छ: माह के लिए योरोप घूमने भेज दिया और शिक्षा मंत्रालय को अपने अधीन कर लिया । फिर उन्होंने देशवासियों से मार्मिक अपील की कि यह अभियान उनका है, इसलिये जी जान से उन्हें इसे सफल बनाना है । और यदि वे इसमें असफल हो गये तो दुनिया के सामने उनका सिर तो झुक ही जायेगा, वे अविश्वसनीय भी माने जाने लगेंगे। इसका आशानुरूप असर हुआ । जन जन में यह भावना व्याप्त हो गई कि हम फिदेल कास्त्रो और चे ग्वेरा को अपमानित नहीं होने देंगे। देखते ही देखते नवयुवकों और युवतियों के आवेदनों के अम्बार लग गये । इनमें 12 से 18 वर्ष के छात्रों को छांट लिया गया और उनका गहन प्रशिक्षण शुरू कर दिया गया ।

योजना यह थी कि इन्हें एक राष्ट्रीय ब्रिगेड के रूप में संगठित किया जाये और पूरे एक साल के लिये उन दूरदराज के इलाकों में भेजा जाये जहां इन्हें लोगों को साक्षर करना है । वहां ये लोगों के साथ उनकी तरह रहेंगे, उनके कामों में हथ बंटायेंगे और जब उन्हें समय मिलेगा, पढ़ायेंगे । इनके व इनके शिक्षार्थियों की स्वास्थ्य की देखभाल के लिए डाक्टरों/नर्सों को पाबन्द किया जायेगा ताकि इनके अभिभावकों को किसी प्रकार की चिंता न हो । सबसे बड़ी बात, इस सारी योजना को मानीटर करने का दायित्व फिदेल ने स्वयं अपने हाथों में लिया ताकि देशवासी आश्वस्त रहें और नौकरशाही कोई गलत काम न कर पाये ।

1961 में क्यूबा एक पूंजीवादी समाज ही बना हुआ था और अधिकतर उपभोक्ता वस्तुओं का निर्माण, विपणन व विज्ञापन अमरीकी निगमों द्वारा ही हो रहा था । वे निगम और निहित स्वार्थी लोग अभियान का मजाक तो उड़ा ही रहे थे ब्रिगेडिस्टाओं (स्वयं सेवकों) को परेशान भी कर रहे थे । लेकिन आम जनता के उत्साही तेवरों के सामने उनकी दाल नहीं गल रही थी । बल्कि कोकाकोला को तो इसके पक्ष में प्रचार तक अपने खर्चे पर करने को बाध्य होना पड़ा था ।

फिदेल ने साक्षरता के लिए लोगों में कुछ ऐसा जनून पैदा कर दिया कि पूरे साल लोगों की आखों में लालटेन और किताब ही घूमती रही । हर ब्रिगेडिस्टा को प्राइमर भाग प्रथम व द्वितीय तथा आचार संहिता की कुछ प्रतियां, दो जोड़ी मोजे, दो पैन्ट, दो शर्ट, एक जोड़ी बूट, एक कंबल, एक टोपी, एक लालटेन और एक झूले वाला बिस्तर देकर गंतव्य स्थल की ओर रवाना कर दिया गया । इस सामूहिक स्थानान्तरण के पीछे साक्षरता को सरकारी आदेश से प्रतिरोपित करने की प्रवृत्ति से बच कर रहना तो था ही, किसानों और शहरी लोगों के बीच फैले अलगाव व अपरिचय को मिटाना भी था। इस अदभुत महाप्रयाण पर निकलते समय फिदेल ने ब्रिगेडिस्टाओं को कहा कि आप लोगों को शिक्षित करने जा रहे हैं लेकिन उन्हें शिक्षित करते हुए आप स्वयं भी बहुत कुछ सीखेंगे । जब आप वहां से लौटेंगे तब आपकी मांगें बहुत कम हो गई होंगी। अपने अभिभावकों को आप बेहतर ढंग से समझने लग गये होंगे । जब आप शहरी सुविधाओं के बिना वहां रह चुके होंगे तो आपको अपने घर की कमियां नहीं खलेंगी । आप यह जान जायेंगे कि शहरों की मांगों को पूरा करने के लिए किसानों को कितनी मशक्कत करनी पड़ती है और बदले में उन्हें क्या मिलता है ।''

जब आदमी यह महसूस करने लगता है कि वह भी अन्य लोगों की तरह अपने अस्तित्व, श्रम और काम के फल का स्वामी बन सकता है, तब अनिवार्यत: वह राजनीति में दखल देने की सामर्थ्य अर्जित कर लेता है । इस प्रकार राजनीति से परहेज कर साक्षरता को नहीं चलाया जा सकता। शिक्षा निरपेक्ष नहीं हो सकती । शिक्षण संस्थाओं में आज जो संकट है वह यथास्थिति और निहित स्वार्थों के वर्चस्व को ध्वस्त करने व समाज के पुनर्निर्माण का संकट है । इसे सामान्य अनुशासन एवं युवा वर्ग की दायित्वहीनता का नाम देकर जिस तरह सुलझाने की कोशिश की जाती है उससे रोग बेशक जाये, स्थायी उपचार नहीं होता ।

प्राइमर बनाने के लिए परिश्रमपूर्वक ऐसे शब्दों का चयन किया गया जो किसानों के दैनिक जीवन से जुड़े, प्यार, उत्तेजना व क्रोध को अभिव्यक्ति देने वाले थे । हर पाठ के साथ क्यूबाई जीवन का एक बोलता चित्र और सक्रिय शब्दों का समायोजन, जिससे पाठक अपने परिवेश को समझे और उसमें व्याप्त विसंगतियों व उन्हें पैदा करने वाले कारकों का पता लगाये । पाओलो फ्रेरे द्वारा उत्तरी ब्राजील में चलाये गये अभियान की तरह क्यूबाइयों ने भी अपनी पाठ्यपुस्तकों में यथार्थ को उद्घाटित करने वाली आवेशपूर्ण शब्दावली व विषय वस्तु को समाहित किया ।

अभियान से लौटकर एक बारह वर्षीय ब्रिगेडिस्टा अरमान्डो वाल्डेज का कहना था - ''मैं यह कभी नहीं जान पाता कि लोग इस तरह के हालात में भी जिन्दगी बसर करते हैं । मैं तो एक शिक्षित और खाते पीते परिवार का बच्चा था । मेरे लिये वह पुरानी जिन्दगी का अन्त और सर्वथा नई जिन्दगी की शुरुआत जैसी बात थी । मैंने जो कुछ अपनी आंखों से देखा था उसे बिना इस अभियान में भाग लिये देखा, समझा जा ही नहीं सकता था। हर रात मैं अकेले में फूट फूट कर रोता था । लेकिन मेरा यह इरादा कभी कमजोर नहीं हुआ कि हमारे फिदेल ने दुनिया के सामने जो संकल्प लिया है, उसे पूरा करके दिखायें और लोगों को यह मौका हर्गिज न दें कि हमने फिदेल का साथ छोड़ दिया ।''

1961 का यह महाअभियान न केवल जनसहभागिता का एक अनूठा उदाहरण ही बना बल्कि साक्षरता प्रसार के निकटस्थ लक्ष्य को पाने का इसने विश्व कीर्त्तिमान भी स्थापित किया।

इसके दृश्यमान प्रभाव को आज भी वहां की स्कूली शिक्षा के विविध पहलुओं पर देखा जा सकता है । इस क्रांति के 15 वर्ष बाद मैसाच्यूटस विश्वविद्यालय अमहर्स्ट में कार्यरत सुप्रसिद्ध अमरीकी शिक्षाशास्त्री जोनाथन कोजोल ने प्रस्तुत पुस्तक ''चिल्ड्रन ऑफ द रिवोल्यूशन'' अर्थात ''क्रांति की बारहखड़ी'' लिखने के लिए क्यूबा की यात्रा की और वहां के भूतपूर्व ब्रिगेडिस्टाओं, शिक्षा विभाग के अधिकारियों, स्कूल के अध्यापकों, स्वतंत्र शिक्षाशास्त्रियों और जनता के लोगों से सीधे संवाद स्थापित किया व दस्तावेजों का अध्ययन किया । इसी दौरान उनकी जन-शिक्षा विशेषज्ञ डेविड हरमान से मुलाकात हुई । उन्होंने बताया कि बिना सामाजिक आर्थिक रूपान्तरण का लक्ष्य सामने रखे आम लोगों को शिक्षित करने की बात सोची भी नहीं जा सकती । शिक्षा

जब तक भोजन, जमीन, स्वास्थ्य संरक्षण और ऐसी ही जरूरी मानवीय आवश्यकताओं से नहीं जुड़ेगी, सफल हो ही नहीं पायेगी।

कोजोल इसी बिन्दु को आधार बना विश्व के विभिन्न देशों में चले साक्षरता अभियानों की समीक्षा करते हुए बताते हैं कि छुटपुट प्रयासों को छोड़कर 1950 के बाद विश्व के जिन देशों में भी साक्षरता अभियान चले हैं यूनेस्को के तत्वाधान में चले हैं । 1965 में इसने अल्जीरिया, माली, तंजानियां, इथोपिया, मैडागास्कर, नाइजेरिया, इक्वेडोर, भारत, सीरिया आदि तेरह देशों में साक्षरता प्रसार कार्यक्रम शुरू किये । इन पर तीन करोड़ बीस लाख डालर खर्च हुए । पर नतीजा यह निकला कि ये देश अपने लक्ष्य समूह के चौथाई निरक्षरों को भी साक्षरता की परिधि में नहीं ला सके । यह विफलता संसाधनों की कमी की वजह से नहीं बल्कि धोखे में रखने की खुल्लमखुल्ला कार्रवाई की वजह से मिली। विश्व बैंक के जॉन सिमन्स ने मेडागास्कर और अल्जीरिया का स्वयं दौरा कर जांच की तो वे यह देखकर हैरान रह गये कि वहां एक भी व्यक्ति ने पढ़ना-लिखना नहीं सीखा था । आखिर 1976 में प्रकाशित अपनी रिपोर्ट में यूनेस्कों को स्वीकार करना पड़ा कि तीन करोड़ बीस लाख डालर खर्च कर डालने पर भी उसकी उपलब्धि प्राय: नगण्य सी रही है ।

यूनेस्को ने क्यूबा के अभियान का अध्ययन कर रिपोर्ट देने का दायित्व जिस दल को सौंपा, उसकी एक सदस्य थीं डा.अन्ना लारजेंटो । इस दल ने अपनी तथ्यात्मक रिपोर्ट एक वर्ष में दे दी। लेकिन यूनेस्को उसे अनेकों वर्षो तक दबाये रहा । आखिर 1965 में इसे स्वयं क्यूबा ने इंगलिश, फ्रैंच और स्पेनिश में छापा । इसमें क्यूबाई प्राइमरों में प्रदर्शित विचारधारात्मक आग्रह और ब्रिगेडिस्टाओं की कर्तव्यनिष्ठा की भरपूर प्रशंसा की गई थी ।

लारजेंटों का मानना है कि साक्षरता अभियान को सफलता लोबाच, लेनिन या गुन्नार मिर्डल द्वारा प्रतिपादित तरीकों से नहीं मिल सकती । इसके लिए टॉलस्टॉय की पुस्तक 'ऑन एज्यूकेशन' में दर्शाये गये तरीके से ही उल्लेखनीय उपलब्धि तक पहुंचा जा सकता है । इसमें टॉलस्टॉय कहते हैं - ''हम चाहे शब्द ध्वनियों से पढ़ाना शुरू करें या शब्दों से जुड़ी पहचानों से, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता । इनमें से कोई भी सूरत में तब तक कारगर नहीं होगा जब तक शिक्षा का जुड़ाव लोगों के लिये एक बेहतर जीवन के आश्वासन से नहीं होगा । और यह आश्वासन इतना पक्का होना चाहिये कि लोगों को लगे कि ऐसा सचमुच होने जा रहा है ।'' असल में यही वह काम है जो यूनेस्को नहीं कर सकता, न कभी करेगा ही। इसलिये न वह कामयाब हुआ है न होगा ।

लारजेंटों के मतानुसार जब एक निरक्षर पढ़ना सीखने की राह पर बढ़ता है तो सारा समाज स्वयं स्कूल जाना शुरू कर देता है । विद्यालय अपने दरवाजे जीवनानुभवों, काम संबंधी समस्याओं और भुखमरी की ट्रेजडी के लिये खोल देता है । समाज जब स्कूल जाने लगता है तो उन अज्ञात शक्तियों के नकाब उठने लगते हैं जिनके हित अब तक उन्हें निरक्षर बनाये रखने में रहे हैं । जन भागीदारी और सामाजिक आर्थिक यथार्थ की चेतना निरक्षरता उन्मूलन की पहली व प्रमुख शर्त है । राउल फ्रेरे इसी तथ्य को और अधिक स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि यूनेस्को द्वारा संचालित अभियानों के प्रारंभ बिन्दु ही मानव विरोधी रहते हैं । उनकी पाठ्यपुस्तकें भूमि सुधार, गरीबी, बीमारी, बेकारी, भुखमरी जैसी वास्तविकताओं से जी चुराती हैं । इनके लेखन उन कारणों को बताने की हिम्मत ही नहीं रखते जो लोगों को लाचार बनाते हैं । चूंकि वे जिन्दगी के यथार्थ से कतराते हैं इसलिये कामयाबी उनसे दूर रहती है ।

गरीब आदमी सदियों से खामोश है । केवल साक्षरता ही उसे खोई आवाज फिर से दिला सकती है । जब आदमी यह महसूस करने लगता है कि वह भी अन्य लोगों की तरह अपने अस्तित्व, श्रम और काम के फल का स्वामी बन सकता है, तब अनिवार्यत: वह राजनीति में दखल देने की सामर्थ्य अर्जित कर लेता है । इस प्रकार राजनीति से परहेज कर साक्षरता को नहीं चलाया जा सकता। शिक्षा निरपेक्ष नहीं हो सकती । शिक्षण संस्थाओं में आज जो संकट है वह यथास्थिति और निहित स्वार्थों के वर्चस्व को ध्वस्त करने व समाज के पुनर्निर्माण का संकट है, इसे सामान्य अनुशासन एवं युवा वर्ग की दायित्त्वहीनता का नाम देकर जिस तरह सुलझाने की कोशिश की जाती है उससे रोग बेशक जाये, स्थायी उपचार नहीं होता ।

प्रस्तुत पुस्तक की विषयवस्तु क्यूबाई समाज के पुनर्शोध की वह प्रक्रिया है जो अपने इतिहास को अपने हाथ में लेकर उसे रचते हुए और उस प्रक्रिया में स्वयं को रचते हुए खुद उन सर्वाधिक गंभीर और दृढ़ क्रांतियों में से एक के प्रति प्रतिबद्ध पाती है जिसे हम जानते हैं । यह एक ऐसी क्रांति है जो अपनी शुरुआत से ही बिना किसी यूटोपियन आदर्शवाद के अपने आप में एक महान शिक्षक बन गई । पाउलो फ्रेरे का मत है कि यह पुस्तक कम से कम उन लोगों को तो निस्सन्देह टस से मस नहीं कर पायेगी जो सच को झुठलाने के लिये सचेत ढंग से कमर कसे रहते हैं । पर ऐसे लोग जो साक्षरता से होने वाली मनुष्य की मुक्ति पर विश्वास करते हैं या वे जो हाल-फिलहाल अनिश्चित-सी स्थिति में हैं पर जो एक क्रांतिकारी विषय को खुली आंखों से देखने से परहेज नहीं करते, उनके लिये यह किताब अवश्य ही एक असीम प्रेरणा का स्रोत साबित होगी । ◆